कविता

चित्रा न होती

इन्हीं गर्मियों की एक दोपहर चित्रा तेरह की हो गई है
उससे कुछ पहले अप्रैल की एक सुहावनी सुबह
शाम में जब पेड़ों के पत्ते सड़कों पर तैर रहे थे
शीला ने पन्द्रह पूरे किए हैं

दोनों बड़ी होनहार हैं आंसू पौंछते हुए कहती है काकी
उसे अफसोस है उसने क्यों किया रुदन बेटियों के जन्म पर
और काकी ही क्यों, काका भी यही कहते हैं गर्व से भरकर
बड़ी होनहार लड़कियां हैं
भाई भी यही कहते हैं
अड़ौसी-पड़ौसी भी यही कहते हैं
गांव में जाते हैं तो काका बाबा बड़े बुजुर्ग सब यही कहते हैं

यदि बोलकर बता सकते पौधे, फूल, पत्तियां
मेमने, पिल्ले और मुर्गियां
तो वे भी यही कहते
बड़ी होनहार हैं ये लड़कियां

इनके जन्म से पहले और तब भी जबकि इनका जन्म हो गया
काका-काकी, घरवालों, बाहर वालों सबने की थी इनके न होने की दुआ
चित्रा के तो तीन साल की हो जाने तक भी यही कहा जाता रहा
दो लड़कियां हो गई थीं बहुत थीं
ये तीसरी न होती
चित्रा न होती

कोई भी चीज लम्बी नहीं चलती

कोई भी चीज इतनी लम्बी नहीं चलती
न खामोशी लम्बी चलती है
न आंसूओं की झड़ी
न अट्टहास
न हंसी
न उम्मीद न बेबसी

गरीबी को लम्बा चलाने की साजिश रची जाती है दिनरात
मगर समृद्ध करते रहते हैं लोग/
अपना जीवन और-और तरीकों से
पूंजी के बिना भी जीते हैं लोग गाते हुए गीत और लोरियां

प्रभात
हिन्दी साहित्य में एमए, युवा कवि, वर्तमान में स्वतंत्र लेखन रत, पानियों की गाड़ियों में (बाल कविता संग्रह), विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कविताएं प्रकाशित।
31बी, पुरुषार्थ नगर बी, जगतपुरा, जयपुर-25 राजस्थान